Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 1 | (Jan – Mar 2026)

भारतीय संस्कृति और साहित्य का अंतः संबंध

कृष्णा सरदार [1], डॉ. जैस्मिन पटनायक [2]

[1] शोधार्थी, हिन्दी विभाग, कलिंगा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइंसेस (किस), मानित विश्वविधालय, भुवनेश्वर, ओडिशा

[2] शोध निर्देशिका, हिन्दी विभाग, कलिंगा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइंसेस (किस), मानित विश्वविधालय, भुवनेश्वर, ओडिशा

सारांश

भारतीय संस्कृति और साहित्य का गहरा और अटूट संबंध है। भारतीय संस्कृति विभिन्न धर्मों, परंपराओं, भाषाओं और कलाओं का समावेश करती है, जबकि साहित्य न केवल संस्कृति का दर्पण है, बल्कि इसे दिशा देने और विकसित करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जो समाज की चेतना, विचारधारा और मूल्यों को व्यक्त करता है। भारतीय साहित्य विभिन्न भाषाओं में समृद्ध हुआ है, जैसे हिन्दी, संस्कृत, तमिल, बंगाली आदि जो क्षेत्रीय संस्कृतियों को दर्शाते हैं। संस्कृति मानव समाज की पहचान का भी महत्त्वपूर्ण हिस्सा है और उसकी एकता, सामरिकता और विविधता को बनाए रखने में मदद करती है। साहित्य संस्कृति का महत्त्वपूर्ण अंग है जो भाषा के माध्यम से व्यक्ति की भावनाओं, विचारों और अनुभवों को साझा करता है। प्राचीन कल से लेकर आधुनिक युग तक साहित्य ने सांस्कृतिक मूल्यों, सामाजिक परिवर्तनों और दार्शनिक विचारधाराओं को अभिव्यक्त किया है। वेद, उपनिषद, महाकाव्य, भक्ति साहित्य और आधुनिक साहित्य सभी ने समाज को दिशा देने का कार्य किया है। भारतीय साहित्य सदियों से संस्कृति के संवाहक के रूप में कार्य करता आया है, जिसमें धार्मिक, दार्शनिक, ऐतिहासिक और सामाजिक तत्वों की गहरी झलक मिलती है। साहित्य और संस्कृति दोनों एक–दूसरे को प्रभावित और समृद्ध करते है, जिससे भारतीय सभ्यता सतत विकासशील बनी रहती है।

बीज शब्द: भारतीय संस्कृति, साहित्य, परंपरा, समाज, सांस्कृतिक मूल्य।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति और साहित्य का संबंध गहरा एवं अविभाज्य है। साहित्य भारतीय समाज के विचारों, परंपराओं और मूल्यों को संजोता है, वहीं संस्कृति साहित्य को जीवंतता प्रदान करती है। दोनों एक–दूसरे के पूरक है और भारतीय सभ्यता के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है। साहित्य केवल शब्दों का संयोजन नहीं होता, बल्कि यह समाज की सांस्कृतिक धरोहर, परंपराओं, आदर्शों और मूल्यों का प्रतिबिंब होता है। भारतीय संस्कृति अपने प्राचीन, विविधता पूर्ण और समृद्ध स्वरूप के लिए जानी जाती है और यही विशेषताएँ भारतीय साहित्य में परिलक्षित होती हैं । भारत में वेदों, उपनिषदों, महाकाव्यों, लोककथाओं, आधुनिक उपन्यासों और कविताओं के माध्यम से साहित्य का विकास हुआ है, जिसने विभिन्न युगों में समाज को प्रभावित किया है। साहित्य ने न केवल संस्कृति को संरक्षित किया, बल्कि उसमें समयानुसार परिवर्तन लाने का काम भी किया है। आज के वैश्वीकरण और तकनीकी युग में भारतीय साहित्य और संस्कृति नए रूपों में ढल रहे है। ऐसे में यह महत्त्वपूर्ण है कि हम अपने साहित्य और सांस्कृतिक विरासत को समझें, सँजोएँ और आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाएँ। वास्तविक अर्थों में आजकल के समाज, साहित्य और भाषा की जो स्थिति है वह सही नहीं है। संस्कारों से भाषा में अपेक्षित सुधार हो सकता है, भाषा से संस्कृति का सुधार संभव है और संस्कृति से समाज में अपेक्षित परिवर्तन हो सकता है और जब इन तीनों में ही अवश्यमेव सुधार होंगे तो उससे हमारा देश सही दिशा मेँ जा सकता है। आने वाली पीढ़ियों का भविष्य, उनकी मानसिकता, उनके मूल्य, उनकी नैतिकता, उनका चारित्रिक बल, धार्मिकता, सामाजिकता संबंधी आचरण सुधर सकते है और हम सब का यही तो कर्तव्य है और प्रबुद्ध वर्ग की यही तो चिंता है कि किन उपायों से इन सब में सार्थक सुधार लाया जा सके। भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम और समृद्ध संस्कृतियों में से एक है। यह विविधता, सहिष्णुता, परंपराओं

और मूल्यों का संगम है। भारतीय संस्कृति का विकास विभिन्न धर्मों, भाषाओं, कला रूपों, सामाजिक व्यवस्थाओं और जीवन शैली की अनूठी समायोजन प्रक्रिया के माध्यम से हुआ है। डॉ. संतोष कुमार चतुर्वेदी अपने ग्रंथ 'भारतीय संस्कृति' ग्रंथ में लिखते है– "संस्कृति किसी एक समाज में पायी जाने वाली उच्चतम मूल्यों की वह चेतना है जो सामाजिक प्रथाओं, व्यक्तियों की चित्तवृतियों, भावनाओं, मनोवृतियों, आचरण के साथ–साथ उसके द्वारा भौतिक पदार्थों को विशिष्ट स्वरूप दिये जाने में अभिव्यक्त होती है।"[1]

संस्कृति के माध्यम से ही समाज के नवयुवक अपने देश की परंपरा–धर्म, दर्शन, इतिहास, ज्ञान–विज्ञान एवं विरासत से परिचित हो पाते है। अगर हम विश्व–सभ्यता के इतिहास के पन्नों को पलट कर देखें तो यह दिखाई पड़ेगा कि मानव जाति को विशिष्टता प्रदान करने में संस्कृति की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। संस्कृति ही उसे सामाजिक एवं ऐतिहासिक धरातल प्रदान करती है। संस्कृति की रश्मियों से ही किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व सजता, सँवारता एवं निखरता है। 'गिरिराज' डॉ. गिरिधारी राम गौंझू अपने ग्रंथ 'झारखण्ड की सांस्कृतिक विरासत' में लिखते है– "संस्कृति जीवन का संस्कार है। हमारी मनोवृत्तियों का परिष्कार है। जिसे हम स्वयं बनाते हैं और इसी से नियंत्रित होते है। यही संस्कृति हमारे व्यवहार और विचार में, हमारे विश्वास, मान्यता, धारणा एवं अभिव्यक्ति में दिखाई देती है। जीवन के सारे आदर्श, शील-स्वभाव, जीवन–मूल्य, जीवन–दर्शन, जीवन-कला, नैतिकता एवं सौन्दर्य-बोध सभी कुछ संस्कृति में समाए हुए है।"[2]

भारतीय संस्कृति का विश्व संस्कृति में अपना अनुपम स्थान है। यह जीवन के भौतिक पक्ष की अपेक्षा आध्यात्मिक पक्ष पर बल देती है। साथ ही यह व्यक्तित्व के एक कल्पनाशील एवं भावना-प्रवण, उदार एवं सौम्य आदर्श पर जोर देती रही है। यह आदर्श अत्यंत प्राचीन काल से लेकर आज तक किसी-न-किसी रूप में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता रहा है। भारत विभिन्नताओं से भरा हुआ देश है। चाहे प्रकृति हो, भौगोलिक संरचना हो, जलवायु हो, लोगों का रहन-सहन, रूप-रंग एवं परिवेश हो, बोली एवं भाषा हो सब में यह विभिन्नता सहज ही दिखायी पड़ती है। भारत में विभिन्न धर्म, भाषा, परम्परा और रीति-रिवाज एक साथ सह-अस्तित्व में है। हिन्दू, बौद्ध, जैन, सिख, इस्लाम और ईसाई धर्मों की शिक्षा भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। भारतीय समाज विभिन्न धार्मिक सांस्कृतिक प्रभावों को आत्मसात करने में सक्षम रहा है, जिससे यहाँ अनेक परम्पराएँ विकसित हुई है। भारतीय संस्कृति में संगीत, नृत्य, नाटक, चित्रकला और वास्तुकला का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। पारिवारिक मूल्यों और रिश्तों की गहरी समझ भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। डॉ. संतोष कुमार चतुर्वेदी अपने ग्रंथ 'भारतीय संस्कृति' ग्रंथ में लिखते है- ''अनेकता में एकता' और 'एकता में अनेकता' भारतीय संस्कृति का प्राणतत्व है। कई विरोधो का सामंजस्य इसमें सहज ही दिखाई पड़ता है। भारतीय संस्कृति अपने विशिष्ट गुणों के साथ प्राचीनतम समय से ही प्रवाहित होती आ रही है। विश्व के अनेक देशों ने इस संस्कृति को अपनाकर इसे 'विश्ववारा' अथवा 'विश्व संस्कृति' का गौरव प्रदान किया है। हमारी भारतीय संस्कृति प्रायः सम्पूर्ण विश्व को अपनी तरफ आकृष्ट करती है।"[3]

साहित्य समाज का दर्पण है, यह हम सब जानते है। आत्मा और शरीर का जो संबंध है वही संबंध साहित्य और समाज का है। या शाश्वत सत्य है कि साहित्य की अपेक्षा समाज पहले जन्म लेता है। समाज से ही साहित्यकार जन्म लेते हैं। साहित्यकार के व्यक्तित्व की पहचान अलग होती है। सच्चे साहित्यकार गंभीर, चिंतनशील, संवेदनशील, दूरदृष्टा, व्यापक दृष्टिकोण रखते हुए भावना और संवेदनाओं से परिपूर्ण होते है। क्योंकि अपनी लेखनी से वे समाज का निर्माण करते है, सृजन करते है, वह भविष्य में समाज की, संस्कृति का निर्माण करते है। डॉ. श्यामसुंदर दास अपने ग्रंथ 'साहित्यालोचन' में लिखते है- "साहित्य पर सबसे महत्त्वपूर्ण प्रभाव साहित्यिकार के व्यक्तित्व का पड़ता है। साहित्यकार जो कुछ लिखता है उस पर उसके अनुभव, विचारों और मनोभावों की अटल छाप लगी रहती है। वह मनुष्यमात्र की आकांक्षाओं, इच्छाओं और भावनाओं को प्रकट करता है, किन्तु वह सबको अपने ढंग से स्वरूप देकर अपनी रुचि के अनुसार उपस्थित करता है।"[4]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि वास्तव में साहित्य, समाज और संस्कृति तीनों ही एक दूसरे के अनुपूरक कहे जा सकते है, क्योंकि किसी एक का भी अस्तित्व दूसरे के बिना संभव हो ही नहीं सकता। इतिहास इस बात का साक्षी है कि मानव ने

किस प्रकार आदिम युग से लेकर आज तक के वैज्ञानिक युग तक का सफर तय किया है। वह जंगल और गुफाओं से होता हुआ आज अंतरिक्ष तक पहुँच गया है। साहित्य सभी कलाओं की अपेक्षा समाज से अपना संबंध अधिक गहराई तक बनाए रखने में सफल होता है। आचार्य महावीर प्र. दिवेदी के अनुसार- 'ज्ञान राशि के संचित कोश का नाम साहित्य है, अर्थात साहित्य और जीवन का गहरा संबंध है। साहित्य का आधार जीवन है। इसी कड़ी में बालकृष्ण भट्ट लिखते है- 'प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है, जो जिस जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिलुप्त रहती है, वे सब भाव उस समय के साहित्य की समालोचन से अच्छी तरह प्रकट हो सकते है' इसलिए भारतीय समाज में साहित्य, समाज का प्रतिबिंब माना जाता है। साहित्य मानव संस्कृति का प्रणेता, रक्षक व वाहक है। नर्मदा प्रसाद उपाध्याय अपने ग्रंथ 'भारतीय कला के अंतर्संबंध' में लिखते हैं-"साहित्य तब तक साहित्य है ही नहीं जब तक उसमें कही स्व है, निजता है, केवल अपने तक सिमटने का भाव है। साहित्य समग्र का है, इसीलिए साहित्य, साहित्य है और तैत्तरीय उपनिषद में इस भावना का उद्घोष 'रसो वैसः' कहकर किया गया है अर्थात रस हमारी सबकी दैवीय प्रकृति है।"[5]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि साहित्य व्यक्ति की सौंदर्यात्मक व कलात्मक अभिरुचि की पूर्ति करने वाली ईकाई है। साहित्यकार का दृष्टिकोण व्यक्तिमूलक होते हुए भी विश्वात्मक होता है। उसके विचार समाज और संस्कृति से नियमित होते है। साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि यह समाज का मार्गदर्शक और परिवर्तन का प्रेरक है। भारतीय साहित्य अपनी विविधता, गहराई और सांस्कृतिक मूल्यों के कारण विश्व साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इसके माध्यम से संस्कृति का संरक्षण और नई पीढ़ियों तक इसका हस्तांतरण संभव होता है। परंपरा किसी भी समाज की पहचान होती है और यह उसकी संस्कृति का अभिन्न अंग होती है। यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होने वाली वे जीवनशैली, मान्यताएं, रीति-रिवाज, आचार-विचार और संस्कार है जो किसी भी समुदाय की विशिष्टता को दर्शाते है। प्रो. प्रदीप श्रीधर द्वारा संपादित ग्रंथ 'भारतीय ज्ञान परम्पराएं विषयगत अनुशीलन' पर स्वयं अपने शोध आलेख का शीर्षक 'भारतीय ज्ञान परंपराः शाश्वत सांस्कृतिक मूल्यों से संवाद' में लिखते हैं- "भारतीय ज्ञान परंपरा, जिसे भारतीय विचारधारा या हिन्दू-दर्शन के रूप में भी जाना जाता है, ज्ञान, विश्वासों और प्रथाओं का एक ऐसा समूह है जो भारतीय उपमहादीप में अत्यंत प्राचीन काल से चले आ रहे हैं। यह ज्ञान परंपरा वैदिक शास्त्रों में गहराई से निहित है और हजारों वर्षों में विकसित हुई है, जिसने भारत के सांस्कृतिक, बौद्धिक और आध्यामिक परिदृश्य को आकार दिया है।"[6] भारतीय समाज में परम्पराएं अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रही हैं, जो वेदों, धर्मग्रंथों, लोककथाओं और सांस्कृतिक मान्यताओं से विकसित हुई है। संस्कृत में 'परंपरा' शब्द का अर्थ है "सतत प्रवाह" या पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलने वाली परिपाटी"। यह समाज में व्यापक नैतिकता, ज्ञान, आस्थाएं और सांस्कृतिक धरोहर को अगली पीढ़ी तक पहुँचाने का साधन है।

भारतीय परंपराओं की निम्न विशेषताएँ है-

- **धार्मिक परम्पराएं-** विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान, पूजा-पद्धति, व्रत, तीर्थ यात्राएँ, मंदिर और मस्जिदों की परम्पराएं भारतीय संस्कृति में गहरी जड़े रखती हैं।
- **सांस्कृतिक परम्पराएं-** भारतीय संगीत, नृत्य, नाट्य, चित्रकला और लोक कलाएं परंपराओं के माध्यम से संरक्षित और विकास हुई है।
- **सामाजिक परम्पराएं-** विवाह, नामकरण, अंत्येष्टि जैसे संस्कार, संयुक्त परिवार व्यवस्था, अतिथि सत्कार और विभिन्न त्योहार सामाजिक परंपराओं का हिस्सा है।
- **ज्ञान और शिक्षा की परंपरा-** गुरुकुल प्रणाली से आधुनिक विश्वविद्यालयों तक, भारतीय ज्ञान परंपरा सतत रूप से विकसित होती रही है।
- **अहिंसा और सहिष्णुता-** भारतीय परंपरा में सहिष्णुता, समरसता और अहिंसा का विशेष स्थान रहा है, जिसे महात्मा गांधी ने अपने विचारों में आगे बढ़ाया।

आधुनिक समय में विज्ञान और वैश्वीकरण के प्रभाव से परंपराओं में बदलाव आ रहा है। कुछ परम्पराएं समय के साथ परिवर्तित हो रही है, जबकि कुछ में नई व्याख्याएँ जोड़ी जा रही रही हैं। यह आवश्यक है की हम अपनी परंपराओं को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें और उन्हें समयनुसार प्रासंगिक बनाए रखें। परंपरा समाज को एकता और स्थायित्व प्रदान करती है। यह अतीत की सीख को वर्तमान से जोड़ते हुए भविष्य की दिशा तय करने में सहायक होती है। भारतीय परम्पराएं न केवल हमारी सांस्कृतिक धरोहर हैं, बल्कि वे जीवन को संतुलित और समृद्ध बनाने का मार्ग भी दिखती हैं। प्रत्येक समाज का एक सांस्कृतिक आधार भी होता है। प्रत्येक संस्कृति, उस समाज की आत्मा, उसकी पहचान होती है, जिस प्रकार किसी भी सभ्यता एवं संस्कृति में व्यापक अच्छाई और बुराई को हम सब देखते है, महसूस करते है कि यह हमारे समाज में किस प्रकार फैल रही है, समाज को दूषित कर रही है, संस्कारों का हनन कर रही है। उसी प्रकार साहित्यकार इन सब को देखते हुए, इन सब पर अपनी व्याख्या प्रदान करते हुए, समाज में परिवर्तन लाने का प्रयास करते है। डॉ. जोवाकिम डुंगडुंग ये. स. अपने ग्रंथ ‘आदिवासी-मूलवासी सदान और गैर आदिवासी संस्कृति एक अवलोकन’ में लिखते हैं- “संस्कृति का सीधा अर्थ है, परिष्कार या संस्कार। वस्तुतः परिमार्जित संस्कार ही संस्कृति है। संस्कृति मानव के रचनात्मक मस्तिष्क की उपज है अर्थात मानव के कार्य और व्यवहार को ही संस्कृति कहते है। संस्कृति का अर्थ न केवल नृत्य-गान और सभ्यता से संबंधित है, वरन मानव जीवन का सम्पूर्ण कार्य और व्यवहार, संस्कृति से जुड़ा है। जैसे-सोचने और बोलने-चलने का तरीका, गाने-बजाने और नृत्य की अभिव्यक्ति का ढंग आदि। अंतः संस्कृति मानव-जीवन के कार्य और व्यवहार के उत्थान और पतन का के दर्पण है। हम यों कहें संस्कृति मानव-व्यवहार और कार्य की एक प्रतिच्छया है।”[7]

इतिहास साक्षी है की मानव सभ्यता के विकास में साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। नवीन विचारों ने साहित्य को जन्म दिया तथा साहित्य ने मानव की विचारधाराओं में गतिशीलता प्रदान करते हुए उसे सभ्य बनाने का कार्य किया है। किसी भी राष्ट्र या समाज में आज तक जीतने भी परिवर्तन आए है, वह सब साहित्य और संस्कृति के माध्यम से ही आए है।

निष्कर्ष-

भारतीय समाज में साहित्य का दर्शन जन्म से लेकर हर खुशी के मौके, तीज-त्योहारों ही नहीं मृत्यु तक के दुख गीतों में हो जाता है। साहित्य जीवन के शाश्वत मूल्यों का प्रतिबिंब है। भारतीय समाज और साहित्य का गहरा संबंध है और दोनों एक दूसरे के पूरक है। समाज शरीर है तो साहित्य आत्मा। साहित्य मानव मस्तिष्क से उत्पन्न होता है। साहित्य मनुष्य को मनुष्यता प्रदान करता है। अंततः कहा जा सकता है कि साहित्य और समाज एक सिक्के के दो पहलू है। वास्तव में हर देश का साहित्य उस देश की लौकिक सभ्यता एवं संस्कृति, मातृ भाषा, लोक गीत, लोक भाषाओं, (जन भाषाओं) तथा तत्कालीन परिस्थितियों (सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, राजनीतिक) को भी उजागर करता है। साहित्य एक राष्ट्र की धरोहर है, उसका अभिमान है, गौरव है, पहचान है।

संदर्भ सूची

1. चतुर्वेदी, डॉ. संतोष कुमार, भारतीय संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 2017, पृष्ठ सं – 11
2. ‘गिरिराज’ डॉ. गिरिधारी राम गौंझू, झारखण्ड की सांस्कृतिक विरासत, पृथ्वी प्रकाशन, रोहतक रोड, न्यू दिल्ली, 2019 पृष्ठ सं – 19
3. चतुर्वेदी, डॉ. संतोष कुमार, भारतीय संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 2017, पृष्ठ सं – 65

4. दास, डॉ. श्यामसुंदर, साहित्यालोचन, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली , 2018, पृष्ठ सं – 46

5. उपाध्याय, नर्मदा प्रसाद, भारतीय कला के अंतर्संबंध, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2021, पृष्ठ सं – 03

6. श्रीधर, प्रो. प्रदीप, भारतीय ज्ञान परम्पराएं विषयगत अनुशीलन, सदीनामा प्रकाशन, 38E, Prince Bakhtiar Sah Road, Kolkata, 2025, पृष्ठ सं – 13 – 14

7. ये. स. डुंगडुंग, डॉ. जोवाकिम, आदिवासी – मूलवासी सदान और गैरआदिवासी संस्कृति एक अवलोकन, झारखण्ड झरोखा, राँची, 2020, पृष्ठ सं – 27